Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2023 SHISRRJ | Volume 6 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

वैदिक देव वरुण

लक्ष्मण तिवारी
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Publication Issue :
January-February-2023
Volume 6, Issue 1
Page Number : 128-130
Article History
Received : 01 Jan 2023
Published : 20 Jan 2023

शोधसारांश- उत्तर-वैदिक काल अर्थात् ब्राह्मणों में वरुण का मुख्य रूप से रात्रि-गगन के साथ सम्बन्ध बताया गया है। उदाहरण के रूप में यह बताया गया है कि मित्र ने दिन को जन्म दिया तथा वरुण ने रात्रि को जन्म दिया। शतपथ के अनुसार यह लोक मित्र है और द्युलोक वरुण है।

मुख्य शब्द- उत्तर-वैदिक, काल, प्राकृतिक, वरुण, देवता, प्राणी।

देव विषयक – देवताओं की आकृति मनुष्य के समान है। उनके शारीरिक अवयव कई स्थलों पर उन प्राकृतिक दृश्यों के रूपात्मक प्रतिनिधि है। देव द्युतिमान प्राणी है। प्राचीन आर्य भाषाओं में देव-द्योतक समस्त शब्द प्रकाशनार्थक देव धातु से निष्पन्न है।

नैतिक देव की कल्पना – अधिकांश विद्वानों का मानना है कि अवेस्ता के सर्वश्रेष्ठ देवता 'अहुर मज्दा' वैदिक देवता वरुण (असुरो वरुण:) ही है। इसका अभिप्राय यह है कि ये दोनों ही 'असुर' (असु=प्राण, अतएव प्राणदायक, जीवनप्रदाता) उपाधि धारण करते हैं।

वरुण, इन्द्र को छोड़ ऋग्वेद के अन्य सभी देवताओं से महान् हैं। वरुण देवता की स्तुति लगभग एक दर्जन सूक्तों में हुआ है।

वरुण का व्यक्तित्व मानवीय रूप में शारीरिक पक्ष की अपेक्षा नैतिक पक्ष में अधिक विकसित हुआ है। उनके शरीर तथा उपकरणों का वर्णन बहुत कम है, क्योंकि इनके वर्णन में अधिक बल उनके कार्यों पर दिया गया है। उनके मुँह, आँख, भुजाएँ, हाथ एवं पैर हैं।

वरुण आर्यों के प्रमुख देवता हैं। वरुण का मानव रूप एकान्त सुन्दर है। वह अपने भुजाओं को हिलाते हैं, शरीर पुष्ट एवं मांसल है। वरुण का स्वर्णिम कवच दर्शकों के नेत्रों को चकाचौंध कर देता है। सूर्य उनका नेत्र है। वह दूर की वस्तुओं को भी देख सकते हैं तथा उनके सहस्त्र नेत्रों का वर्णन है। उनका रथ सूर्य के समान चमकता है जिसमें सुन्दर घोड़े रहते हैं। अपने नेत्र के द्वारा वे सम्पूर्ण भुवनों के अन्दर घटित होनेवाली घटनाओं का निरीक्षण करते हैं एवं मनुष्यों के हृदय में संचरणशील भावों का भी पूर्ण ज्ञान रखते हैं।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

वरुण सम्राट् तथा स्वराट् की उपाधि से अलङ्कृत हैं। वे क्षत्र (प्रभुत्व) के अधिपति होने से 'क्षत्रिय' नाम से भी जाने जाते हैं। उनके लिए 'असुर' (प्राणदायक) का भी प्रयोग किया गया है। वरुण की अनिवर्चनीय शक्ति का नाम माया है जिसके द्वारा वे जगत् का संचालन करते हैं।

इसी माया के बल पर वरुण जगत् का रक्षण एवं संवर्धन करता है। वृष्टि को भेजकर अन्न उपजाता है तथा जगती को बलीयसी बनाता है। सूर्य को आकाश के बीचो-बीच प्रकाश के निमित्त भेजता है तथा हिरण्यमयी उषा की प्रेरणा करता है। अत्रि ऋषि इसी माया का निर्देश एवं रूप-संकलन कर रहे हैं -

माया वां मित्रावरुणा दिवि श्रिता सूर्यो ज्योतिश्चरति चित्रमायुधम्।

तमभ्रेण वृष्ट्या गूहथो दिवि पर्जन्य द्रप्सा मधुमन्त ईरते॥[1]

वरुण के अनुशासन के वशवर्ती बनकर ही नक्षत्र अपने गमनागमन का निश्चय करते हैं। जगती को चमकाता हुआ चन्द्रमा रात को आता है वरुण की ही आज्ञा से। इसका अभिप्राय यह है कि वरुण के व्रत अदब्ध-अघर्षणीय होते हैं। 'ऋतगोपा' वरुण के अनुशासन में ही इस विश्व का अणु से अणुतर पदार्थ एवं महत् से महत्ता पदार्थ परिचालित होकर अपनी सत्ता तथा स्थिति धारण करता है एवं इसे महनीय बनाता है। विश्व के इस महनीय तथ्य का प्रतिपादक ऋषि का यह कथन है – **"अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि"**, अर्थात् जो कोई व्यक्ति वरुण के इस व्रत का उल्लंघन करता है, व्रतपालन में शिथिलता करता है, व्रत-मार्ग की व्यवस्था का तिरस्कार कर अव्यवस्था को अपने जीवन का लक्ष्य बनाता है उसे वरुण कभी क्षमा नहीं करते। वे क्रुद्ध होकर उस व्यक्ति को अपने नाशकारी आयुध का पात्र बनाते हैं तथा पाशहस्त वरुण उस व्यक्ति को अपने विकट पाश से जकड़ देते हैं।

वरुण के नियम सदैव निश्चित एवं दृढ़ हैं और इसीलिए वरुण के लिए 'धृतव्रत' शब्द का प्रयोग किया गया है। स्वयं देवता लोग भी वरुण के व्रत का पालन करते हैं। उनके बिना न तो उड़ने वाली पक्षियाँ एवं न बहने वाली नदियाँ अपने गन्तव्य स्थान को प्राप्त कर सकती हैं। वह समग्र विश्व एवं सभी प्राणियों के निवास-स्थान को व्याप्त कर विद्यमान है। वह सर्वज्ञ है, वह आकाश में उड़ने वाली पक्षियों के मार्ग को, समुद्रगामी नावों के पथ को, सुदूर बहने वाले वायु के प्रवाह को भलिभाँति जानता है।

वरुण इस विश्व के नैतिक अध्यक्ष के रूप में विख्यात हैं। पाप करने से, उनके व्रतों को भंग करने से, उनका क्रोध उत्पन्न होता है एवं पापियों को दण्ड देते हैं।

'वृणोति सर्वम्' इस व्युत्पत्ति के अनुसार वरुण ही जगत् के आवरणकर्त्ता देवता हैं। आकाश जगतीतल का आवरण करने के कारण ही वरुण का चल-चक्र कहा जा सकता है। वरुण की देवत्व-कल्पना नितान्त प्राचीन युग में ही सम्पन्न हो गई थी, क्योंकि ग्रीस देश में वरुण की कल्पना 'यूरेनस' के रूप में प्राप्त होती है। बोगाजकोई से प्राप्त शिलालेख में वरुण वर्तमान है, जिससे ज्ञात होता है कि ईस्वी पूर्व 15 सौ वर्ष पहले मितानी लोगों के भी वे उपास्य देवता थे।

वरुण का वास्तविक स्वरूप – वरुण देवता द्युलोक के सर्वोत्तम एवं शक्तिशाली देवता के रूप में प्रसिद्ध हैं। वरुण के मुख्य स्वरूप के विषय में निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट है -

(1) वरुण एवं इन्द्र में वैषम्य बताया गया है। जिस प्रकार इन्द्र भौतिक स्तर पर सबसे बड़े देवता थे, उसी प्रकार वरुण नैतिक स्तर पर महनीय देवता थे।

(2) वरुण एवं मित्र दोनों एक साथ रहते हैं। अत: ऋग्वेद संहिता के 23 सूक्तों में दोनों की एक साथ स्तुति प्राप्त होती है। ऋग्वेद में मित्र एवं वरुण एक ही रथ पर साथ-साथ आरोहण करने वाले बताये गये हैं[2]।

(3) नैतिक व्यवस्था से सम्बद्ध होने के कारण मित्र एवं वरुण मनुष्यों के द्वारा सम्पादित नैतिक नियमों के व्यवस्थापक के रूप में वर्णित किये गये हैं। इसके लिए वे दूत तथा स्पश का उपयोग करते हैं। स्पश के अन्तर्गत 'सूर्य' जो उनका चक्षु बताया गया है दिन में दूत बनकर आते हैं। इन स्पशों का कार्य आकाश तथा पृथ्वी को अच्छी तरह देखना है –

परि स्पशो वरुणस्य स्मदिष्टा

उभे पश्यन्ति रोदसी सुमेके।[3]

(4) वरुण मानवों के नैतिक आचरणों के द्रष्टा होने से ही उनको पुण्यों के लिए पुरस्कृत करता है तथा उनके पापों के लिए दण्डित करता है। जो उनके व्रत का उल्लंघन करते हैं उन्हें वह अपने पाशों से बाँधता है एवं उन्हें जलोदर रोग से आक्रान्त कर देता है। ऐतरेय ब्राह्मण में शुन:शेप के आख्यान में राजा हरिश्चन्द्र वरुण के द्वारा स्थिर नियमों का पालन न करने से उन्हें जलोदर नामक रोग से पीड़ित होना पड़ता है तथा शुन:शेप के आलम्भन से ही उसे निष्कृति मिलती है। वरुण अपराधियों को दण्ड देता है तथा वह उन व्यक्तियों को पुरस्कार भी देता है जो अपना अपराध स्वीकारते हैं अथवा उसके लिए प्रायश्चित करते हैं।

वरुण के विषय में यह भी बताया गया है कि वे ऋतुओं का नियमन करते हैं। वे बारह मासों को जानते हैं[4]। मित्र, वरुण तथा अर्यमा के लिए कहा गया है कि इन्होंने शरद्, मास, दिन और रात्रि को अलग–अलग धारण कर रखा है[5]।

ऋग्वेद में वरुण को जलों का शास्ता बताया गया है। उन्होंने सरिताओं को प्रवाहित किया, ये सरिताएँ वरुण के ऋत का अनुसरण करती हुई सतत प्रवाहित होती रहती है[6]।

ऋग्वेद में वरुण दिन तथा रात दोनों की चमक के स्वामी हैं, जबकि मित्र केवल दिन के दिव्य प्रकाश के देवता माने जाते हैं।

उत्तर–वैदिक काल अर्थात् ब्राह्मणों में वरुण का मुख्य रूप से रात्रि–गगन के साथ सम्बन्ध बताया गया है। उदाहरण के रूप में यह बताया गया है कि मित्र ने दिन को जन्म दिया तथा वरुण ने रात्रि को जन्म दिया[7]। शतपथ के अनुसार यह लोक मित्र है और द्युलोक वरुण है।

सायणाचार्य ने वरुण का 'वृ' धातु से निष्पत्ति मानते हुए इसका अर्थ 'आवृत करने वाला' या 'दुष्टों को अपने बंधन में बांधने वाला' करते हैं और[8] तैत्तिरीय संहिता की अपनी टीका में अन्धकार की तरह छिपाने वाला[9] बताया गया है।

सन्दर्भ

1. ऋ॰ 5।63।4

2. ऋ॰ 5।62।8, 5।63।1, 5।68।5

3. ऋ॰ 7।87।3

4. वेद मासो धृतव्रतो द्वादश प्रजावत:। ऋ॰ 1।25।8

5. वि ये दधु: शरदं मासमादहर्यज्ञमक्तुं चादृचम्।

6. प्र सीमादित्यो असृजद्विधर्ताँ ऋतं सिन्धवो वरुणस्य यन्ति।
न श्राम्यन्ति न वि मुञ्चन्त्येते॥ ऋ॰ 2।28।4

7.मित्रोहरजनयद्वरुणो रात्रिम्। तै॰ सं॰ 6।4।8।3
मैत्रं वा अहर्वारुणी रात्रि:। तै॰ सं॰ 2।1।7।4

8. वरुण शब्दस्यान्धकारवदावरकवाचित्वात् । तै॰ सं॰ (सायण) 1।8।16।1

9. अन्धकारेणावरणहेतुत्वाद्रात्रेर्वारुणत्वम्। तै॰ सं॰ (सायण) 2।1।7।4